© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 03 | January – March 2018

भारतीय विद्वानों के मत में व्याकरण की परिभाषा

अंकुश
हिसार (हरियाणा)ए Email ID: akboorarajli@gmail.com

सार :–

जब भी हम किसी भाषा पर विचार विमर्श करते हैं तो हमारा ध्यान सबसे पहले उस भाषा की व्याकरण पर जाता है। भाषा चाहे हिन्दी हो या संस्कृत, प्रत्येक भाषा में व्याकरण महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। व्याकरण के बिना भाषा अपाहिज व्यक्ति के समान है लेकिन जब हम व्याकरण और भाषा को मिलाकर देखते हैं तो भाषा अत्यंत समृद्धशाली रूप धारण करके मनुष्यों का उपकार करती है। अतः भाषा के लिए व्याकरण प्राणों के समान है।

ISSN 2454-308X
9 770024 543081

महत्त्वपूर्ण बिंदु :– इस शोध पत्र में हम (1) व्याकरण क्या है (2) शब्दानुशासन (3) शब्दोपदेश (4) व्याक्रियन्ते (5) सूत्र और व्याख्यान तथा (6) भर्तृहरि का मत आदि बिन्दुओं पर विचार करेंगे।

(1) व्याकरण क्या है ?

(क) व्याकरण की चर्चा करते हुए पतंजलि ने लिखा था – ''अथशब्दानुशासनम्''। इसकी की 'पस्पशाह्निक' में पुनः व्याख्या करते हुए उन्होंने इसे 'शब्दान्वाख्यान' भी कहा है।

(ख) दूसरा शब्द, इसी प्रसंग में, वे 'शब्दोपदेशः' भी देते हैं।

(ग) एक स्थल पर स्वतः 'व्याकरण' की परिभाषा देते कहते हुए वे कहते हैं– 'व्याक्रियन्ते शब्दा अनेन अस्मिन् वा इति'।

(घ) 'सूत्र ही व्याकरण है'[1] – इस पक्ष पर बहस करते हुए वे अन्ततः इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि 'स्मृति, उदाहरण, प्रत्युदाहरण और वाक्याध्याहार मिलकर व्याकरण बनाते हैं, इनसे उसका व्याख्यान होता है।'[2]

(ड़) 'शब्दकोष' से व्याकरण का अन्तर बताते हुए अन्यत्र वे कहते हैं 'सप्तद्वीपा वसुमती.....इत्यादि।' उनकी दृष्टि में यदि केवल शब्दों का उपदेश ही व्याकरण का कार्य हो, तब शब्दोपदेश तो सहस्त्रों वर्षों में भी पूरा न हो सकेगा। पर, दूसरी ओर, केवल नियम–निर्धारण या सूत्रोपदेशमात्र को भी वे व्याकरण नहीं मानते।

दूसरे शब्दों में, पतंजलि के समय तक बहुत से वैयाकरण पाणिनी की व्याकरण–संबंधी मूल धारणा से दूर जा पड़े थे, और वे यह सोचने लगे थे कि कदाचित् नियम से ही व्याकरण का कार्य पूरा हो जाता है। 'सूत्रव्याकरणम्' की धारणा देखने में जितनी ही आकर्षक लगती है, उतनी ही यह भ्रमावह है। इस धारणा को ठीक से न समझ पाने का ही परिणाम था।

पाणिनी के बाद जितने भी व्याकरण बनने लगे, उनमें शब्द रचना प्रक्रिया और नवप्रचलित शब्दों के समावेश को ही मुख्य लक्ष्य बना लिया गया। शब्दों को किसी नियम के अंतर्गत सिद्ध करना मात्र ही पाणिनी का लक्ष्य नहीं था।

उणादि सूत्रों के निर्माण के पीछे उनकी मूल भावना यह है कि हमें किसी शब्द को देखते ही, उसकी रचना–सिद्धि का प्रयास छोड़कर, उसकी मूल भावना पर जाने का प्रयास करना चाहिए।

पर यह बात परवर्त्ती वैयाकरण नहीं समझ पाए। पतंजलि के प्रयत्न के बाद भी यह बात हृदयंगम नहीं की गई। इसका परिणाम यह कि जिस भी शब्द पर उन परवर्त्ती वैयाकरणों की निगाह गई, उसे ही प्रकृति–प्रत्यय के विभाग में लाने के लिए, और संस्कृत की परंपरा को सिद्ध करने के लिए,

उन्होंने नये–नये नियम बनाने आरम्भ कर दिए। 'सूत्र' की मूल भावना थी 'व्यापक फार्मूला' या 'व्यापकत्तम आधार का संबंध–सूत्र' प्रस्तुत करना। किन्तु बाद में यह भावना न रही। तब सूत्रों को और इसलिए 'व्याकरण' को भी ऐसा साधन समझा जाने लगा, जिससे हम शब्दों के असाधुनिर्माण को रोक सकें और इस प्रकार भाषा को 'अशिष्ट' या 'अपभ्रंश' होने से बचा सकें।

पतंजलि के महाकाव्य के पहले 'आद्धिक' में ही हम उन्हें इन सब समस्याओं से पूरी तरह परिचित पाते हैं। यही कारण है कि वे आरंभ से अंत तक इस आद्धिक में, व्याकरण के सही रूप और सही उद्देश्य को समझने–समझाने में लगे रहे हैं।

(2) शब्दानुशासन

'अथशब्दानुशासन'[3] वस्तुतः 'अथ व्याकरणम्' का ही पर्यायवाची है। तब क्या शब्दानुशासन ही व्याकरण है ? 'शब्दानुशासन' की एक व्याख्या भर्तृहरि ने महाकाव्य की अपनी 'त्रिपदी टीका' में की है : 'य एव लौकिकः शब्दोऽसावेवाश्रीयते। तस्यवेदमनुशासन शास्त्रम्'।[4] अर्थात लोकप्रयुक्त शब्दों का 'अनुशासन' की व्याख्या करना ही इस व्याकरण शास्त्र का लक्ष्य है। शब्दों की परिगणना करना या उनके निर्माण के तथाकथित नियम–विधान बताना ही व्याकरण का लक्ष्य नहीं है बल्कि शब्द सम्बन्धि पूर्ण ज्ञातव्य का व्याख्यान करना ही व्याकरण का कार्य है। 'अनुशासन' शब्द 'शसु अपदेशे' और शासु अनुशिष्टौ धातुओं से बनता है। प्रथम धातु के अनुसार व्याकरण 'भाषा का उपदेश या व्याख्यान' है जबकि दूसरे अर्थ के अनुसार व्याकरण 'भाषा का नियंत्रण' है। यहाँ नियंत्रण 'अनुशासन' के अर्थ में ही है, 'नियामक' के अर्थ में नहीं। व्याकरण भाषा के नियन्त्रण का दूसरा नाम इसी अर्थ में है कि उसके द्वारा हम उन विविध प्रक्रियाओं और उनकी नियामिक शक्तियों को पहचानने में समर्थ होते हैं जिनके द्वारा भाषा की अर्थभावना, पद–रचना और वाक्य–रचना में परस्पर संबंध बना रहता है। भाषा की आन्तरिक रचना और प्रयुक्त शब्दों के पारस्परिक सम्बन्ध निर्धारण को ही 'भाषा का नियन्त्रण' कहा जा सकता है। व्याकरण का कार्य इसे ही समझना है। भर्तृहरि उक्त वाक्य में ''लौकिक शब्द'' कहकर 'लोकभाषा' को व्याकरण के आधार रूप में रख देते हैं जिससे व्याकरण का विकास और विस्तार भी भाषा के नित्य विकास की भांति सतत् और गतिशील सिद्ध हो जाता है।

(3) शब्दोपदेश

इस प्रसंग में पतंजलि ने दूसरा शब्द 'शब्दोपदेश' प्रयोग किया है। 'शब्दोपदेशः कर्त्तव्योऽपशब्दोपदेशा वा'।[5] शब्द और अपशब्द की इस चर्चा को छोड़ भी दें तब भी 'शब्दोपदेश' स्वतः महत्त्वपूर्ण है। 'केषां पुनः शब्दानां?' अर्थात् किन शब्दों का ? पूछते हुए पतंजलि स्वयं ही इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि भले ही साधु शब्द थोड़े हों, तब भी पतंजलि कहते हैं उनका उपदेश यदि प्रतिपद के साथ किया जाये तो अनन्त काल तक शब्दोपदेश ही सम्भव नहीं होगा। बृहस्पति जैसा गुरू जब इन्द्र जैसे शिष्य को सहस्त्राधिक वर्ष में भी पूरा शब्दोपदेश न दे सका, तब अल्पकालिक मानव–जीवन में शब्दोपदेश की पूर्णता की संभावना को स्वीकार करना कोरी कल्पना ही कहा जायेगा।[6] यहाँ भी 'उपदेश' की व्याख्या करते हुए महावैयाकरण भर्तृहरि उसे ''पारम्पर्येणाविच्छिन्न उपदेश आगमः कहते हैं।[7] अर्थात् परम्परा से अविच्छिन्न उपदेश को आगम कहते हैं। परन्तु इसी के साथ ही वे आगम को 'श्रुतिलक्षण' और 'स्मृतिलक्षण' भी कह देते हैं।[8] अर्थात् उस उपदेश का आश्रय 'श्रुति' और 'स्मृति' दोनों पर होता है। दूसरी जगह वे व्याकरण को स्मृतिशास्त्र भी कहते हैं।[9] अर्थात् उस 'उपदेश' का अपना महत्त्व है। और व्याकरण के सूत्र को 'स्मृतिसूत्र' नाम देते हैं।[10] इससे स्पष्ट है कि शब्दोपदेश का अर्थ भर्तृहरि केवल पुस्तकगत या ज्ञानगत शब्दकोष या शब्दसंचय मात्र से ही नहीं लेते हैं बल्कि वे व्यवहार जगत् में प्रयुक्त कोषबाह्य शब्द राशि को भी उसका विषय मानते हैं।

(4) व्याक्रियन्ते

व्याकरण शब्द का लक्षण करते हुए पंतजलि लिखते हैं – 'व्याक्रियन्ते शब्दा अनेन अस्मिन् वा इति'। अर्थात् 'जिसके द्वारा या जिसमें शब्दों को व्याकृत किया जाता है।' 'व्याकृति' का अर्थ 'व्याख्या' किया जा सकता है किन्तु इससे अधिक अच्छा यह होगा कि इस शब्द की व्याख्या हम भर्तृहरि के ही मुख से सुन लें। वे लिखते हैं – 'तत्रायं व्याकरणशब्दः किं ब्रूते ? 'व्याक्रियते इत्यनेन द्वारेण शब्दप्रवृतिनिमित्तमाचि – ख्यासन्नुपन्यासं करोति'।[11] अर्थात् व्याकरण के माध्यम से हम शब्द के प्रवृति–निमित की उपलब्धि करना चाहते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि भर्तृहरि के अनुसार पतंजलि 'व्याकरण' को शब्द का 'प्रवृतिनिमित' मानते हैं। दूसरी ओर, वे हमें एक नया और प्रतिस्पर्धी शब्द देते हैं – 'अपाकरण'। किसी ने पूछा 'आपके कितने पुत्र हैं' एक, दो या अनेक ?' उत्तर मिला एक भी नही। प्रश्न को इस प्रकार अनवकाश कर देना अथवा दूसरे शब्दों में किसी शब्द की निवृत्ति कर देना 'अपाकरण' है।[12] इस प्रकार 'व्याकरण यदि शब्द का प्रवृत्तिनिमित्त' है, तो अपाकरण उस प्रक्रिया को कह सकते हैं जो शब्द की निवृतिनिमित्त है।

(5) सूत्र और व्याख्यान

'सूत्रम्'[14] कहकर पतंजलि ने उस धारणा की ओर निर्देश किया है जिसके अनुसार उस समय तक बहुत से विद्वान् केवल नियम–निर्देश को ही 'व्याकरण' समझने लगे थे। यदि 'व्याकरण' या 'भाषाविज्ञान' का कार्य केवल नियम निर्धारण और उनका परिगणन मात्र ही स्वीकार कर लिया जाये, तब बहुत से ऐसे नियम बन जायेंगे जो एकदेशी होंगे और इसलिए अव्यापक होने से 'नियम' या फार्मूला कहलाने के अधिकारी न होंगे। उदाहरणार्थ – यदि रामः, कन्याः, ज्ञानम् आदि शब्दों को देखकर हम कर्त्ताकारक और प्रथमा विभक्ति के अलग–अलग नियम एवं उनकी अलग–अलग पहचान निश्चित करने लगे तब यह स्थिति जनभावना की दृष्टि से नितांत अव्यहार्य होगी। हमें एक जगह विसर्ग मिले, एक जगह 'अयः' किसी अन्य सीान पर शब्द का मूलरूप तो कहीं बाह्य चिह्न रहित उसका आन्तरिक परिवर्तनयुक्त रूप! पर, प्रयोक्ता की दृष्टि से इन सबके प्रयोग काल में, कर्त्ता, एकवचन आदि की स्थिति एक–सी ही रहती है। अतः सच्चा वैयाकरण इस सबमें दिखने पर या न दिखने पर भी मूलतः एक ही प्रत्यय या पहचान की स्थिति स्वीकार कर सकता है।[15] 'शब्दाऽप्रतिपतिः। ..... किं तर्हि ? व्याख्यानतः। ननु च तदेव सूत्रं पिगृहीतं व्याख्यानं भवति।16 अर्थात् केवल सूत्रों या नियम निर्माण से ही शब्दों प्रतिपति या उपलब्धि नहीं हो सकती। उसके लिए व्याख्यान की जरूरत है। व्याख्यान का अर्थ है, उसी सूत्र को समझकर कहना। जब किसी नियम को समझाकर कहते हैं, तभी उसकी सार्थकता होती है। तब यह व्याख्यान क्या है ? पतंजलि स्वयं व्याख्यान की परिभाषा करते हैं : स्मृत्युदाहरण प्रत्युदाहरणं वाक्याध्याहारश्चेति।[17] व्याख्यान का अर्थ है स्मृति, उदाहरण, प्रत्युदाहरण और वाक्याध्याहार आदि का समकालिक विवेचन। जब पतंजलि कहते हैं कि 'उत्सूत्र' या सूत्र से बाह्य बात समझी नहीं जाती, तब भर्तृहरि उसकी व्याख्या में कहते हैं – भर्तृहरि व्याकरण को केवल स्मृति शास्त्र ही कह दिया है। किन्तु आगे चलकर वे उदाहरणादि को भी अनिवार्य घोषित करते हैं।

इन सब बातों से स्पष्ट होता है कि भविष्य की सब परिवर्तन प्रक्रियाओं पर नियंत्रण नहीं रख सकता। किन्तु अपने समय तब चली आने वाली सब प्रक्रियाओं का विश्लेषण करके भविष्य के मार्ग की आधारशिला वह अवश्य रख देता है।

(6) भर्तृहरि का मत

प्रवृतिनिमित को अधिक समझाते हुए भर्तृहरि कहते हैं – 'शब्दो हि कश्चितुल्यरूप प्रवर्त्तमानो भिन्नार्थो भिन्ननिमितः परस्परमनपेक्षमाणः प्रवत्तते'[13] अर्थात तुल्य या एक सा दिखाई देने वाला शब्द बहुधा

भिन्न अर्थ में, भिन्न निमित से भिन्न स्थान पर और सर्वथा स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त किया जा रहा होता है। उसके इस प्रयोग–निमित या प्रवृतिनिमित को पहचान निकालना की 'व्याकरण' का कार्य है।

निष्कर्ष :–

इसका अर्थ यह हुआ कि व्याकरण का कार्य शब्दों की आकृति और उनकी रचना को सिद्ध करना नहीं है बल्कि उनके प्रयोग के निमित को खोज निकालना और औचित्य को सिद्ध करना भी है। यह औचित्य अन्य शब्दों द्वारा भी सिद्ध किया जा सकता है। पतंजलि कहते हैं – 'शब्दैरपि शब्दाः व्याक्रियन्ते'[18] अर्थात् शब्द भी शब्द की प्रवृत्ति की व्याख्या कर सकते हैं। भर्तृहरि ने 'वाक्यपदीय' के तृतीय काण्ड के संबंध समुद्धेश में उपचार–सत्ता और प्रतिचार–सत्ता के रूप में दो सत्ताएँ स्वीकार की हैं।[19] उनका संबंध शब्दों में अर्थ के नियमन से है। 'उपचार–सत्ता' किसी अर्थ को सम्मुख लाने या उस अर्थ को प्रवर्त्तन करने की निमित्त बनती है जबकि प्रतिचार सत्ता के द्वारा प्रतिषेध्य अर्थ का प्रतिषेध होता है। लगता है इन्हीं सत्ताओं के आधार पर प्रवृत्तिनिमित्त और निवृतिनिमित का भेद करते हुए, भर्तृहरि ने 'व्याकरण' और 'अपाकरण' को परस्पर उपकार 'दो पार्श्व' माना है। 'न हि शब्दाः प्रोक्ताः'।[20] अर्थात् शब्द कहीं पहले से पढ़े गये नहीं हैं, कहने वाले पतंजलि निश्चय ही व्याकरण को किन्हीं निश्चित शब्दों का निर्माण करने वाला नहीं मानते हैं। हमारा भी यह मत है कि हम व्याकरण को एक सीमित क्षेत्र तक नहीं रख सकते हैं। व्याकरण का क्षेत्र काफी विस्तृत है। इसके अंतर्गत काल, वचन, कारक, लिंग आदि सभी आते हैं।

सन्दर्भ :–

1. सूत्रं व्याकरणम्, म. 1.1.1
2. 'स्मृत्युदाहरण' आदि, म. 1.1.1
3. म. 1.1.1
4. म. त्रि. 1.1.1
5. म. 1.1.1
6. वही 'सप्तद्वीपा वसुमती..... ।
7. म. त्रि. 1.1.1
8. वही
9. 'उच्यते स्मृतिशास्त्रमिदम् म. त्रि. 1.1.1 तथा वा. 1.143
10. 'स यदा स्मृतिसूत्रमाह' म. त्रि. 1.1.1
11. म. त्रि. 1.1.1
12. 'कति भवतः पुत्राः' इत्यादि। म. त्रि. 1.1.1
13. म. त्रि. 1.1.1
14. सूत्रं व्याकरणम्, म. 1.1.1
15. इसी आधार पर पाणिनी के 'सुप' और तिङ्.' प्रत्ययों की आरम्भिक रूपगत एकता की व्याख्या की जा सकती है।
16. म. 1.1.1
17. म. 1.1.1
18. म. 1.1.1
19. वा. 3.3.39–41 विस्तृत विवरण के लिए देखें, भाषा. वाक्य. पृष्ठ 195
20. म. 1.1.1